MAH MUL/03051/2012
ISSN: 2319 9318

Vidyawarta®
Peer-Reviewed International Journal

April To June 2021
Issue-38, Vol-04

01

आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

विद्यावार्ता

अतिथि संपादाक :

१. शिवशेट्टे गोविंद

२. डॉ. राठोड अनिल

३. डॉ. भगवान कदम

४. डॉ. शिंदे प्रकाश

५. डॉ. शेख मुखत्यार

६. डॉ. वारले नागनाथ

७. डॉ. यशवंतकर संतोषकुमार

❖ **विद्यावार्ता** या आंतरविद्याशाखीय बहूभाषिक त्रैमासिकात व्यक्त झालेल्या मतांशी मालक, प्रकाशक, मुद्रक, संपादक सहमत असतीलच असे नाही. **न्यायक्षेत्र:बीड**

"Printed by: **Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.** Published by **Ghodke Archana Rajendra** & Printed & published at Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.,At.Post. Limbaganesh Dist,Beed -431122 (Maharashtra) and Editor **Dr. Gholap Bapu Ganpat.**

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.

At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed
Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295
harshwardhanpubli@gmail.com, vidyawarta@gmail.com

All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors / www.vidyawarta.com

INDEX

0) भक्त कवियों का नारी विषयक दृष्टिकोण और समकालीन स्त्री–विमर्श
डॉ. पवन कुमार आर्य ||16

02) हिंदी साहित्य में नारी विमर्श
डॉ. संतोष रामचंद्र आडे, जि. जालना, महाराष्ट्र ||20

03) महादेवी वर्मा के निबंधों मे नारी जीवन विमर्श : एक अनुशीलन
डॉ. संतोष कुमार अहिरवार, सागर (म.प्र.) ||24

04) उषा प्रियम्वदा की कहानियों में स्त्री विमर्श
डॉ. छाया बाजपेई, फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश ||28

05) ''अंतिमसाक्ष्य'' उपन्यास में स्त्री विमर्श
डॉ. बलवंत बी. एस., जि.सातारा ||31

06) हिंदी साहित्य एवं स्त्री–विमर्श का स्वरूप
डॉ. गोविन्द कुमार धारीवाल, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड ||33

07) हिंदी कथा साहित्य में चित्रित स्त्री–विमर्श
सुरज विठ्ठल डुरे, कडेपूर ||37

08) कमलेश्वर का तीसरा आदमी में व्यक्त स्त्री विमर्श
डॉ. वसंत पुंजाजीराव गाडे, औंढा नागनाथ ||39

09) साठोत्तरी हिंदी महिला उपन्यासकारों के उपन्यासो में परिवर्तन सामाजिक मूल्यबोध
प्रा. दिगंबर ज्ञानोबा गायकवाड, जि.लातूर ||41

10) जीवन स्रोतों के परिरक्षण में भारतीय महिलाओं की भूमिका
डॉ० गरिमा जैन, कानपुर, उत्तरप्रदेश ||44

11) स्त्री विमर्श की हस्ताक्षर : गीतांजलि श्री
प्रा.डॉ. द्वारका गिते, जिल्हा बीड, महाराष्ट्र ||47

12) आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में स्त्री विमर्श (कुछ महिला उपन्यासकारों के विशेष ...
डॉ. अर्चना हजारिका, लखीमपुर, असम ||50

www.vidyawarta.com/03 http://www.printingarea.blogspot.com

66) हिंदी साहित्य में अभिव्यक्त दलित चेतना
डॉ.संतोष गिरहे, नागपुर (महाराष्ट्र) ||247

67) हिंदी साहित्य में दलित साहित्य का बदलता परिदृश्य
शीशराम मीणा, उदयपुर ||251

68) चुनौतियों के तहखाने में आदिवासी समाज ('जंगल पहाड़ के पाठ' के विशेष ...
डॉ. प्रिया ए., कोट्टयम, केरल ||254

69) भारतीय संविधान में आदिवासी जनजाति के संदर्भ मे प्रावधान
डॉ. गोविंद गुंडप्पा शिवशेट्टे, जि. लातूर ||257

70) आदिवासी साहित्य उद्गम और विकास
प्रा. कैलास काशिनाथ बच्छाव, जि. नाशिक ||259

71) हिंदी कथा साहित्य में चित्रित आदिवासियों की जीवन शैली
प्रा. गणेश दुंदा गभाले, ता.जि. सातारा, (महाराष्ट्र) ||261

72) भूमंडलीकरण के बढते प्रभाव का विश्लेषण :ग्लोबल गाँव के देवता
डॉ.भूपेंद्र सर्जेराव निकाळजे, सातारा ||265

73) दिनकर की दृष्टि में भारतीय संस्कृति की पुरोधा आदिम जनजातियाँ
तरुण पालीवाल, उदयपुर, राजस्थान ||269

74) आदिवासियों का वन संघर्ष
डॉ॰ नीतू परिहार, उदयपुर ||272

75) 'धरती आबा' नाटक में आदिवासी विमर्श
प्रा. पटेकर विश्वनाथ चंद्रकांत, पनवेल ||275

76) आदिवासी समाज की मुकव्यथा के संदर्भ में उदय प्रकाश की कहानी ...और ...
डॉ. प्रकाश भगवानराव शिंदे, जि नांदेड़, महाराष्ट्र ||278

77) आदिवासी कहानियों में अस्मिता संघर्ष
डॉ.सचिन सदाशिव शिंगाडे ||282

78) जंगल जहॉ शुरू होता है में व्यक्त आदिवासी जीवन का आर्थिक संघर्ष
प्रा.डॉ. यशवंतकर संतोषकुमार, जि. बीड, महाराष्ट्र ||286

79) हिंदी उपन्यासों में चित्रित आदिवासी स्त्री
डॉ. संतोष विजय येरावार, देगलूर ||289

www.vidyawarta.com/03 http://www.printingarea.blogspot.com

MAH MUL/03051/2012
ISSN: 2319 9318 | Vidyawarta® Peer-Reviewed International Journal | April To June 2021 Issue-38, Vol-04 | 0272

भी जनजाति हो। ऐतिहासिक संदर्भ में भारत के लिए इनका विशेष स्थान है। वेद, अरण्यक, उपनिषद, रामायण, महाभारत, बौद्ध तथा जैन साहित्य आदि सभी में इन जनजातियों को आदर सहित स्मरण किया गया है। आधुनिक भारत के स्वतंत्रता के युद्ध में इनका बलिदान अविस्मरणीय है। दिनकर इन आदिम जनजातियों के प्रति अगाध श्रद्धा तथा सम्मान प्रकट करते हैं। जिन्होंने इस महान संस्कृति के निर्माण तथा विकास में अपूर्व योगदान दिया हैं।

संदर्भ सूची :

१. श्यामाचरण दुबे : मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पाँचवाँ संस्करण २०१६, पृ.६९

२. दिनकर रचनावली (संपादक—नंदकिशोर नवल और तरुण कुमार), भाग—आठ (कुल भाग—चौदह), लोकभारती प्रकाशन, नयी दिल्ली, २०११, पृ.७५—७६

३. वही : पृ.८३

४. वही : पृ.७४

५. वही : पृ.७४

६. वही : पृ.८५

७. वही : पृ.८५—८६

८. कृष्णदेव उपाध्याय : लोक संस्कृति की रुपरेखा, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, २००९, पृ.१२

९. दिनकर रचनावली (संपादक—नंदकिशोर नवल और तरुण कुमार), भाग—आठ (कुल भाग—चौदह), पृ.८६

१०. वही : पृ.७७

११. रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति, भाषा और राष्ट्र, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली,२००८, पृ.१३

❑❑❑

74

आदिवासियों का वन संघर्ष

डॉ॰ नीतू परिहार
सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, हिन्दी—विभाग,
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

****

हिन्दी जगत में पिछले दो दशकों से आदिवासी साहित्य का स्वर मुखर हुआ है। धीरे—धीरे ये साहित्य की मुख्य धारा में सम्मिलित हो रहा है। भारत मे आदिवासी समुदाय सदियों से मुख्य धारा से कटकर अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। आजादी के ७० वर्षों बाद भी उनकी स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। अपनी परंपरा की तलाश में निकला यह दमित पीड़ित वर्ग नयी चेतना से सपंन्न है। कितने वर्षों तक जिन्हें दबाया गया, सताया गया। जिन्हें गाँव के बाहर या जंगलों में खदेड़ा गया। बर्बरतापूर्वक जिन्हें छला गया वे आदिवासी आज भी अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए प्रयासरत हैं।

आदिवासी मूलत: किसान हैं और जल, जंगल और जमीन से जुड़े हैं। आधुनिक सभ्यता के लक्षणों से दूर प्राकशतिक साधनों पर गुजर—बसर करते हैं। वह जंगल के उत्पादों पर ही निर्भर हैं। भारत में सन् १९९० के बाद उदारीकरण, निजीकरण और भूमंड़लीकरण के कारण विकास के नाम पर बड़े औधौगिक घरानों ने आदिवासियों को इनकी जमीन—जगंल से बेदखल कर दिया। इसी पीड़ा को रमणिका गुप्ता व्यक्त करती हैं। वे कहती हैं— वे केवल अपने जंगलों, संसाधनों या गाँवों से ही बेदखल नहीं हुए बल्कि मूल्यों, नैतिक अधारणओं, जीवन शैलियों भाषाओं एवं संस्कशति से भी बेदखल कर दिये गये हैं[१]

आदिवासी अपनी जीविका के लिए जमीन या जंगल पर निर्भर हैं। वास्तव में देश का ९० प्रतिशत धन धरती के ऊपर जंगलो के रूप में है या

धरती के नीचे खनिज पदार्थों के रूप में है। यहीं आदिवासी बसावटें हैं। कहने को वहाँ विकास तो खूब हो रहा है, लेकिन विकास किसका हो रहा है यह प्रश्न मूल है। जंगल धीरे–धीरे कटने लगे, जंगलो में रहने वाले कहाँ गए कोई नहीं जानता। इन लोगों के साथ ही खत्म हो गई उनकी भाषा, रीति–रिवाज उनकी संस्कशति। उनके देवताओं और देवियों को दूसरे लोग हथिया रहे या फिर उन्हें अपने देवता थमा रहे। जबकि सच्चाई ये है कि आदिवासी किसी मंदिर का मोहताज नहीं। उसकी आस्था का केन्द्र तो प्रकशति है। वह जंगल के उत्पादों पर अपनी गुजर–बसर करता है। किंतु विडम्बना यह है कि विकास के नाम पर उन्हें उनकी ही संस्कशति से, जमीन से, जंगल से खदेड़ा जा रहा है। आदिवासी 'प्रवेश के निषेध का कानून' बना कर आदिवासियों को छला जा रहा है। इस नीति से जंगल तो नहीं ही बचे, साथ ही आदिवासी भी उजड़ गए। आदिवासियों में पहले पूरा गाँव सामूहिक रूप से साथ होता था। किसी एक के नाम पट्टा नहीं होता था। यही परम्परा आदिवासियों के लिए घातक सिद्व हुई हरिराम मीणा इस बात को अपनी कविता में कहते हैं –

तुम नहीं कर पाओगे साबित/ .....
...../कि पुश्तैनी थी यह जमीं/चूंकिकृ/तुम्हारे पास कोई पट्टा/कोई खातेदारी/कोई वसीयत/कोई बख्शीस नहीं–नहीं कोई दस्तावेजी सबूत/ चश्मदीद गवाह भी तो नहीं होगा/– स्वयं के सिवा [२]

आज आदिवासियों के सामने सबसे बड़ा संकट है जमीन को अपनी भौम सिद्व करने का। जिस जमीन और जंगल में वे सुरक्षित हैं, जब वे ही नहीं रहेगे तो सुरक्षा कहाँ होगी। आज आदिवासी अपनी जड़ो से विस्थापित हो रहें हैं। उन्हें अपने ही प्राकशतिक परिवेश और संसाधनों से अलग किया जा रहा है। हरिराम मीण लिखते हैं– देश के जो प्राकशतिक संसाधन बचे हुए हैं, हजारों वर्षों से आदिवासी लोग उनके संरक्षक रहे हैं और आज भूमंडलीकरण का वह दौर चल रहा है जब सारे प्राकशतिक संसाधनों का फाटाफट और अंधाधुंध दोहन कर लिया जाए, हो सकता है फिर ऐसा सुनहरा अवसर इन कंपनियों को मिले या न मिले।[३] आदिवासियों को उजाड़ने, खदेड़ने तथा उनकी संस्कशति को घायल करने का काम सतत जारी है। विस्थापन की इस समस्या को कवि अशोक सिंह ने इस तरह से व्यक्त किया है–

संताल परगना दुखी है/ कि यहाँ के जंगल उजड़ते जा रहे हैं/गायब होते जा रहे है यहाँ के पहाड़/ गायब होती जा रही है यहाँ की लड़कियाँ/ दुखी है संताल परगना/ निरंतर कम पड़ते जा रहे हैं उसके खेत [४]

आदिवासी समाज में स्त्री–पुरूष बराबरी का अधिकार रखते हैं किंतु इस बदलते परिवेश में उनकी यह संस्कशति भी घायल हो गई। गरीबी और रोजगार की तलाश में आदिवासी स्त्रियाँ शोषण का शिकार हो रही हैं। डॉ० केरकट्टा इस संदर्भ में लिखती हैं–

आदिवासी शिष्ट साहित्य में स्त्री, श्रम, सहिष्णुता, ममत्व से परिपूर्ण तो मिलती है, लेकिन अपने लिए और परिवार के लिए निर्णय लेती हुई कम मिलती है। वह जीने के लिए कठिन परिश्रम करती है, देस–परदेस जाती है, सेवा करती है, स्वयं को नहीं, दूसरों को प्रसन्न रखने के लिए।[५] आदिवासी स्त्रियाँ कर्मठ हैं, मेहनती हैं। साहित्य में उनका चरित्र इस तरह से प्रस्तुत किया जाता है कि हमारे मानस में उसकी छवी गरीब की या फिर रोमांटिक युवती की बनती है। जबकि हकीकत ये नहीं है वे तो घर–बाहर के हजारों काम करती हैं–

अभी बहुत सारा काम पड़ा है/ घर–गश्हस्थी का/गाय गोहाल के गोबर में फंसी है/ लानी है जंगल से लकड़ियाँ भी/ घड़ा लेकर जाना है पानी लाने झरने पर [६] त्रासदी यह है कि दिन–भर मेहनत करती, रात–दिन अपने को थकाती है, वे पेट भर भोजन भी नहीं पाती। हम जो देखते हैं फिल्मों में कतारबद्व नश्त्य करती, मांदल की थाप पर थिरकती आदिवासी लड़कियों को वह सिर्फ कशत्रिम कलात्मकता है। जबकि हकीकत में भूख से सिकुडी उनकी आंते हैं जो उन्हें मजबूर करती हैं शहरों तक आने को। बंद कमरे में कशत्रिम रोशनी में कविता लिखने वाले कवियों को हरिराम मीणा आगाह करते हैं कि स्त्रियों के मांसल शरीर पर लिखने के बजाय सच्चाई लिखे–

अपना रंगीन चशमा उतार कर देखो/ लड़की की गहरी नाभि के भीतर पेट में भूख से सिकुड़ी उसकी आतों को/ सुनो उन आंतो का आर्तनाद और/

MAH MUL/03051/2012 ISSN: 2319 9318 | Vidyawarta® Peer-Reviewed International Journal | April To June 2021 Issue-38, Vol-04 | 0274

अभिव्यक्त करने के लिए/ तलाशो कुछ शब्द अपनी भाषा [७] आदिवासी इलाकों में बाहरी तत्वों की घुसपैठ से वहाँ की सभ्यता के साथ–साथ वहाँ की स्त्रियों की अस्मिता को भी बहुत खतरा है। बाहरी तत्व आदिवासी स्त्री को उपभोग की वस्तु समझता है और गाँव के प्रधान से मिल कर उनको खरीदने का प्रयास करता है। निर्मला पुतुल अपनी कविता में कहती है–

कैसे बिकाऊ है/ तुम्हारी बस्ती का प्रधान/ जो सिर्फ एक बोतल विदेशी दारू में रख देता है/ पूरे गाँव को गिरवी/ और ले जाता है/ लकड़ियो के गट्ठर की तरह लादकर अपनी गाड़ियों में/ तुम्हारी लड़कियों को [८]अपनी बेरोगारी को खत्म करने आदिवासी लड़कियाँ रोजगार की तलाश में देह व्यापार में अपना सब कुछ खोने को मजबूर हैं। इस व्यापार में जाने के बाद किसी बड़े नगर के कोने में गुमनामी की जिंदगी जीने के लिए विवश हैं। निर्मला पुतुल कई समस्याओं को अपनी कविता में कहती हैं–

सेल्स गर्ल हो/ या किसी हर्बल कंपनी में पैकर?/ वसन्त विहार के मार्केट में कर रही हो/ किसी एस. टी. डी. बूथ की ऑपरेटरी/ ...../ किसी गर्ल्स होस्टल में रहते/ जाती हो रात–बिरात कॉल गर्ल बन/ होटलों में [९] आदिवासी जनजातियों के संरक्षण और विकास के लिए सरकारी संगठनों के पास कई योजनाएँ हैं, लेकिन सिर्फ कागजों में। जिनके लिए ये योजनाएँ बनती हैं उन तक पहुँचने से पहले दलालों तक पहुँच जाती हैं। विकास के नाम पर देशी–विदेशी कंपनियाँ उनके संसाधनों को लूट लेती हैं। निर्मला पुतुल कहती है–

कुकुरमुत्ते की तरह उगी संस्थाओं में/ तथाकथित समाजसेवक हैं/ अफसर हैं, चमचे हैं, ठेकेदार हैं, बिचौलिये हैं/ और वे सब के सब/ हाथों में खुली रंगीन बोतलें लिए/ बना रहें हैं राउंड–टेबुल पर योजनाएँ [१०] आजादी के बाद से ही विकास एवं शोषण की राजनीति चलती रही है। आदिवासियों को सभी ने छला है। उनका फायदा उठाया। जिसको जहाँ मौका मिला उसने वही फायदा उठाया। आजादी के वर्षों के बाद भी आदिवासी शैक्षिक, आर्थिक और वैज्ञानिक विकास में काफी पिछड़े हैं। किन्तु आज के आक्रोशित, तनावग्रस्त माहौल में आदिवासी कवि से कुछ भी अछूता नहीं है। वह सब पड़यन्त्रों का खुलकर विरोध करता है। अनुज लुगुन की कविता देखें–

मंत्री जी की तरह/ जो आदिवासियों का राग भूल गये/ रेमण्ड का सूट पहनने के बाद/ कोई नहीं बोलता उनके हालात पर/ ...../ तुरिया की लावारिस लाश पर/ कोई नहीं बोलता है।। हिंदी कविता में आदिवासी चेतना जल, जमीन, जंगल से प्रारंभ हो गरीबी, अभाव, भूखमरी की समस्या से अपने संघर्ष, हिंसा नक्सलवाद तक देखी जा सकती है। भूमण्डलीकरण और औद्योगीकरण ने आदिवासियों को अपनी जड़ों से उखाड़ दिया। आज की पूंजीवादी व्यवस्था ने जंगलों का अंधाधुंध दोहन किया। आदिवासी साहित्य की इन्हीं जीवनगत विविध समस्याओं और संघर्षों को सामने लाकर देश के कर्णधारों का ध्यान आकर्षित करने में सफल हुआ है। साथ ही उनकी समस्याओं के समाधान के लिए कुछ करने के लिए उन्हें प्रेरित कर पाया है। यही इस साहित्य की सार्थकता है और सफलता भी।

संदर्भ:

१. आदिवासी विकास से विस्थापन, सं. रमणिका गुप्ता, भूमिका

२. हरिराम मीणा, सुबह के इंतजार में, अण्डमानी आदिवासियों को बेदखल होते देखकर, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, सं. २००६ पृ. ३२

३. हरिराम मीणा: वैश्वीकरण और आदिवासी, समवेत, अंक ०३ जुलाई २०१४, पृ. ०१

४. हरिराम मीणा (सं) समकालीन आदिवासी कविता, अलख प्रकाशन, जयपुर, २०१३, पृ. ६७

५. गगांसहाय मीणा (सं) आदिवासी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नयी दिल्ली, २०१४ पृ. १९७

६. निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, अभी खूंटी में टांगकर रख दो मांदल, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली २००५, पृ ७८

७. हरिराम मीणा, सुबह के इंतजार में, आदिवासी लड़की, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, सं. २००६ पृ. १८

८. हरिराम मीणा (सं) समकालीन आदिवासी कविता, अलख प्रकाशन, जयपुर, २०१३, पृ. ६७

९. निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली २००५, पृ. २२

१०. — वही — पृ. २६

११. अनुज लुगुन, अरावली उद्घोष, सितम्बर २०११, पृ. ५४